बिगुल

दुनिया के मजदूरों एक हो!

मासिक बुलेटिन • अंक दो • मई 1996
दो रुपये • आठ पृष्ठ

अन्तरराष्ट्रीय मजदूर दिवस का सन्देश –

चुनाव और सुधार के भ्रमजालों से बाहर आओ!

नई समाजवादी क्रान्ति की ज्वाला भड़काओ!!

आठ घण्टे के काम के दिन की मांग को लेकर शिकागो की सुप्रसिद्ध मई हड़ताल (1 मई), हे मार्केट स्क्वायर नरसंहार (4 मई) और जुझारू मजदूर नेताओं – पार्सन्स, स्पाइस, फिशर और एंजेल को फांसी की घटनाओं के बाद 110 वर्षों का समय बीत चुका है। पूंजीवाद के विरुद्ध मजदूरों के लगातार जारी संघर्ष की एक सदी – साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्ति की पूरी एक सदी बीत चुकी है। एक ऐसी सदी जो 1917 की सोवियत समाजवादी क्रान्ति से लेकर चीन की सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति तक – एक के बाद एक विश्व पूंजीवाद पर समाजवाद की कई जीतों और फिर उसकी अनगिन चमत्कारी उपलब्धियों की गवाह रही है।

लेकिन साथ ही, यह बीतती हुई सदी अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग के आगे बढ़ते कारवां के पीछे हटने और बिखरने की भी गवाह रही है, रूस, चीन और अन्य दूसरे समाजवादी देशों में फिर से पूंजीवाद की जीत की भी गवाह रही है। एक कठिन समय का सामना करना पड़ा है दुनिया के मजदूरों को, खासकर पिछले बीस वर्षों के दौरान।

पर इस अंधकार के गर्भ से नई लाल किरणें फूटने की उजास भी अभी से दीखने लगी है। विश्व पूंजीवाद की बीमारियां ऐसी हैं कि वह मरते हुए बूढ़े कुत्ते की तरह हांफ रहा है। गरीब, पिछड़े देशों की मेहनतकश जनता फिर लड़ाई के लिए उठ खड़ी हो रही है। पेरू की माओवादी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जारी संघर्ष, पूरे लातिन अमेरिका में फिर से उभड़ रहा छापामार संघर्ष, मेक्सिको का किसान विद्रोह, रूस, पूर्व सोवियत गणराज्यों और पूर्वी यूरोप में क्रान्तिकारी मजदूर आंदोलन का नया उभार, यूरोप में लगातार हड़तालें – यह सब तो भावी तूफ़ान के संकेत भर हैं जो बताते हैं कि आने वाला तूफ़ान पूंजीवादी लुटेरों के लिए कितना भयानक होगा!

गुजरे हुए चन्द-एक सालों ने साबित कर दिया है कि न तो समाजवाद की यह हार अंतिम है और न ही पूंजीवाद की यह जीत! लुटेरे अभी अपनी आखिरी हंसी ठीक से हंस भी नहीं पाये थे कि उन्हें फिर से मृत्यु के भय और बदहवासी ने आ घेरा है।

ऐसे समय में अंतरराष्ट्रीय मजदूर दिवस को हमें कैसे याद करना चाहिए? 1905 का साल रूस में क्रान्ति का साल था। उस साल मई दिवस के पर्चे में लेनिन ने लिखा था, "कामरेड मजदूरो, दुनिया भर के मजदूरों का महान त्योहार (छुट्टी का दिन) आ रहा है। पहली मई को वे प्रकाश तथा ज्ञान के लिए अपनी जागृति का; सारे उत्पीड़न, सारे शोषण, सारे निरंकुश शासन के खिलाफ, समाजवादी समाज व्यवस्था के लिए संघर्ष में एक बिरादराना इकाई में अपने जुड़े होने का उत्सव मनाते हैं।"

(पेज 6 पर जारी)

इण्टरनेशनल
(मजदूरों का अन्तरराष्ट्रीय गान)

उठ जाग ओ भूखे बंदी,
अब खींचो लाल तलवार!
कब तक सहोगे भाई,
ज़ालिम का अत्याचार।
तुम्हारे रक्त से रंजित क्रन्दन,
अब दश दिशि लाया रंग!
सौ-सौ बरस के बन्धन,
एक साथ करेंगे भंग!
यह अंतिम जंग है इसको
जीतेंगे हम एक साथ,
गाओ इण्टरनेशनल
भव स्वतंत्रता का गान!

1 मई

आज घोषणा करने का दिन
हम भी हैं इंसान
हमारी मेहनत के बलबूते
है दुनिया की शान
सीना तान के उट्ठो साथी
लेकर यह ललकार
घृणित दासता किसी रूप में
नही हमें स्वीकार

4 मई दिवस इतिहास के पन्नों पर

भारत में मजदूर संघर्षों की गौरवशाली परम्परा 5

डोमिनगढ़ रेल दुर्घटना
हत्यारी व्यवस्था ने ड्राइवर को बलि का बकरा बनाया

आपस की बात

'बिगुल' के पहले अंक के बारे में कुछ साथियों की राय

हम लोग आपस में विचार-विमर्श करके, उसका निचोड़ आप तक भेज रहे हैं जिससे आप हमारी भावना से अवगत हो सकें।

***महत्व** : मजदूरों को राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक स्थितियों को सही रूप में बताया जाये ताकि भविष्य में सामाजिक परिवर्तन की लड़ाई में उनकी अहम भूमिका हो।*

***चुनौतियां** : जाति-धर्म की लड़ाई के मजदूर-विरोधी चरित्र के साथ-साथ भ्रष्ट ट्रेड यूनियनों की कारगुजारियों से मजदूरों को अवगत कराते हुए भूमण्डलीकरण के दौर में मालिक बनने के भ्रम को तोड़ा जाये और उन्हें अहसास दिलाया जाये कि उनकी लड़ाई केवल बोनस, भत्ता की नहीं बल्कि सत्ता की है।*

तकनीकी सुझाव :

1. लेख छोटे-छोटे होने चाहिए।

2. भाषा और भी आसान बनायी जाये।

3. अखबार में ही मजदूरों के सवालों का जवाब देने का भी प्राविधान होना चाहिए।

4. छात्रों के पाक्षिक अखबार 'आह्वान' से 'बिगुल' की काफी समानता है जबकि दोनों दो तरह के पाठकों के लिए निकाले जा रहे हैं।

5. विशेष सम्पादकीय के अन्तर्गत प्रथम पृष्ठ पर जो अक्षर छपे हैं, पूरे बुलेटिन में वही अक्षर छापे जायें।

6. मछुआरों, तेंदूपत्ता व बांस मजदूरों आदि जनता के अलग-अलग तबकों के संघर्षों की रिपोर्टिंग 'बिगुल' में भी आसान भाषा में की जाये।

7. 'बिगुल' के पहले पन्ने पर नाम के साथ वाले झण्डे का रंग लाल किया जाये।

देश के मजदूर आन्दोलन में तमाम क्षेत्रीय या सांगठनिक अखबार तो निकल रहे हैं, लेकिन देश की पूरी मजदूर आबादी को सम्बोधित बुलेटिन 'बिगुल' निकलने पर काफी खुशी हो रही है। आप सचमुच बधाई के पात्र हैं।

कृपया सुझाव दें :

'बिगुल' का वितरण कैसे किया जाये? आकर्षक नारों के साथ हांक लगाकर बेचना तो है ही, और भी तरीके बताये जायें।

इस मामले में ठोस सुझाव अतिशीघ्र दें।

- राकेश कुमार, सुनील,
राकेश, सन्तोष
गोरखपुर

●

साथियो, आपके पत्र की मूल भावना और अधिकांश सुझावों से हमारी सहमति है।

'बिगुल' के आगामी अंकों में आप सभी साथियों की मदद से हम विभिन्न प्रकार के छोटे-बड़े उद्योगों में काम करने वाले मजदूरों, परम्परागत पेशों में लगे मेहनतकशों और विभिन्न इलाकों के खेत-मजदूरों की आर्थिक-सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति, उनकी रोजमर्रे की जिन्दगी की तकलीफों-परेशानियों, उनके शोषण और लूट के विभिन्न रूपों, उनके राजनीतिक अधिकारों में लगातार होती जा रही कटौती, उनके आन्दोलनों और आन्दोलन की समस्याओं के बारे में तफसीलवार ब्यौरे और रिपोर्ट प्रकाशित करेंगे। तभी हम उनकी जिन्दगी की परेशानियों को समझ सकेंगे और उन्हें सही ढंग से यह बता सकेंगे कि मजदूरों और तमाम मेहनतकशों और परेशानहाल मध्य वर्ग के लोगों की मुक्ति का एक ही रास्ता है --साम्राज्यवाद-पूंजीवाद विरोधी नई समाजवादी क्रान्ति का रास्ता! पर इस रास्ते पर आगे बढ़ने के लिए क्रान्ति के अगुवा -- मजदूर वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी नये सिरे से कैसे गठित होगी, सिर्फ बोनस-भत्ता की लड़ाई लड़ने की जगह मजदूर वर्ग को सत्ता की लड़ाई लड़ने के लिए कैसे जगाया जायेगा -- यह राह हमें मार्क्सवाद की क्रान्तिकारी शिक्षा की रोशनी में अपने देश की परिस्थितियों और आज के समय में निकालनी है।

इसके लिए सबसे पहले हमें जनता से सीखना होगा, उसका शिक्षक बनने से पहले उसका विद्यार्थी बनना होगा। हमारा सुझाव है कि 'बिगुल' का वितरण करने जब भी आप मजदूरों के बीच जायें तो उनकी जिन्दगी, पेशा, मानसिकता, चेतना और समस्याओं आदि का बारीकी से अध्ययन करें और ऐसा करने के लिए आप उनके साथ एकदम घुल-मिल जायें, एकरूप हो जायें। तभी हम 'बिगुल' को जनता को जगाने वाला 'बिगुल' बनाने के साथ ही उसका राजनीतिक शिक्षक, संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता बना सकेंगे।

साथियो, हम लोगों की कोशिश यह होनी चाहिए कि 'बिगुल' के वितरण में मजदूरों की सीधे भूमिका बने, मजदूर इलाकों-कारखानों में इसके वितरक एजेण्टों का एक पूरा ताना-बाना खड़ा किया जाये और फिर मजदूरों की क्रान्तिकारी शिक्षा के लिए जगह-जगह रात्रि पाठशालाओं और राजनीतिक अध्ययन चक्रों का नियमित सिलसिला शुरू हो जाये। 'बिगुल' में ज्यादा से ज्यादा मजदूर साथियों के विचार भी छपने चाहिए।

जाति-धर्म की लड़ाई, ट्रेड यूनियनों के नेतृत्व की दलाली, ट्रेड यूनियन आन्दोलन में अर्थवाद की समस्या, भूमण्डलीकरण के नये दौर में मजदूर आन्दोलन के क्रान्तिकारीकरण की चुनौतियों-समस्याओं पर हम लोग लेख अवश्य छापते रहेंगे। पूरी दुनिया और अपने देश के मजदूर आन्दोलन और क्रान्तियों के इतिहास और विचारधारा की शिक्षा भी जरूरी है और मजदूर क्रान्ति की व्यावहारिक ठोस समस्याओं की भी। 'बिगुल' के पृष्ठों की सीमा, फिलहाल मासिक बुलेटिन के रूप में निकालने की सीमा और छोटी टीम एवं कम संसाधनों की सीमा के चलते हमें यह सारा काम धीरे-धीरे करना पड़ेगा। आप सबकी कोशिश से हम इन सभी सीमाओं को तोड़कर 'बिगुल' को साप्ताहिक बनाने की कोशिश करेंगे।

लेख हम भरसक छोटे ही रखना चाहते हैं, पर कभी-कभी किसी मसले पर पूरी बात कहने की भी एक मजबूरी होती है। हमारी कोशिश है कि भाषा एकदम सरल हो। पर यह वास्तव में तभी होगा जब 'बिगुल' की टोली मजदूरों की जिन्दगी के साथ करीब से जुड़ जाये। तब उनकी भाषा हमारी भाषा बन जायेगी।

इसका अलग, स्वतंत्र रूप भी हम निखारने की कोशिश कर रहे हैं। आप लोगों की राय से इसी अंक से 'बिगुल' के नाम के साथ वाले चित्र में झण्डे का रंग लाल किया जा रहा है और कुछ बदलाव भी किया जा रहा है। अक्षर अब इससे अधिक बड़ा नहीं कर सकते क्योंकि तब जगह और घट जायेगी और पेज बढ़ाने लायक पैसे हैं नहीं। पेज बढ़ाने से कीमत भी बढ़ जायेगी जबकि अखबार अभी ही घाटे में है।

'बिगुल' के वितरण के लिए आप लोग कारखानों-वर्कशापों के बाहर गेट-मीटिंग करें और गांव के मेहनतकशों के लिए कस्बों-बाजारों में भी सभाएं करें। गायन टोलियां गठित करके 'बिगुल' के वितरण में मदद लें। इस अखबार का पूरा मकसद बतायें और मजदूरों की सीधे भागीदारी आमंत्रित करें। अधिक विस्तृत राय-मशविरे के लिए लखनऊ, गोरखपुर, मऊ आदि स्थानों के हमारे सम्पर्क केन्द्रों पर साथियों से सम्पर्क करें। अपने अनुभव हमें विस्तार से लिखें और सुझाव भी। अपने इलाके से नियमित रिपोर्ट भी भेजें।

क्रान्तिकारी अभिवादन सहित,

- सम्पादक

पाठक साथियो,
'बिगुल' आपका अपना अखबार है। इसकी हर कमी-बेशी के बारे में खुलकर और साफ-साफ हमें बताइये। इसमें अभी बहुत सी कमियां हैं, इनको दूर करने में हमारी मदद कीजिये और इसमें जो बातें आपको अच्छी लगीं, उनके बारे में भी बताइये जिससे उनपर हम और ध्यान दे सकें। अपनी बातें, राय-सुझाव, अपने सवाल और अपनी आलोचना हमें इस पते पर लिखकर भेजें।

सम्पादक 'बिगुल'
69, बाबा का पुरवा (पुराना), पेपरमिल रोड
निशातगंज, लखनऊ - 226 001

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

(1) 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मजदूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मज़दूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

(2) 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

(3) 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को यह नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

(4) 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर ''कम्युनिस्टों'' और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

(5) 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

बिगुल यहां से प्राप्त करें

- शहीद पुस्तकालय, द्वारा डा. दूधनाथ, जनगण होम्यो सेवा सदन, मर्यादपुर, मऊ
- जनचेतना, जाफरा बाजार, गोरखपुर
- विजय इन्फार्मेशन सेण्टर, कचहरी बस स्टेशन, गोरखपुर
- जनचेतना स्टाल, काफी हाउस के पास, हजरतगंज, लखनऊ, (शाम 5 से 7)
- ओमप्रकाश, बाबा का पुरवा (पुराना), पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ
- सत्यम वर्मा, यूनीवार्ता, काजमी चैम्बर्स, 5, पार्क रोड, लखनऊ
- राहुल फाउण्डेशन, 3/274, विश्वास खण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ
- अरविन्द सिंह, 123, बिड़ला छात्रावास, बी०एच०यू०, वाराणसी
- विश्वनाथ मिश्र, चेतना कार्यालय, बड़हलगंज, गोरखपुर–273402
- डा० डी०के० सचान, (शस्य वैज्ञानिक), A-308 आवास विकास (गंगापुर), रामपुर –244 901
- प्रो० प्यारे लाल, 139, फूलबाग कालोनी, पन्तनगर कृषि विश्वविद्यालय, पन्तनगर–263145
- राजेन्द्र प्रसाद, रेनु मेडिकल की गली, मुख्य सड़क, रेणुकूट, सोनभद्र
- अमृतलाल पाण्डेय, निकट प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, बसखारी, जि. अम्बेडकरनगर
- एतकाद अहमद, डिपार्टमेण्ट ऑफ फाउण्डेशन ऑफ एजुकेशन, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली
- शराफत, क्वार्टर नं. 324, एस.आर. के. छात्रावास, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली
- संतोष शर्मा, Q.No.-L/61K, बरौनी रेलवे कालोनी, बरौनी, बेगूसराय
- चन्द्रकेतु नारायण शर्मा, एडवोकेट, सांचीपट्टी, बागमली गाछी, स्थान–पो–हाजीपुर, जि–वैशाली
- दीपशिखा पत्रिका मंडप, द्वारा श्री शिवदास पाण्डेय, पानी टंकी चौकी, क्लब रोड, मुजफ्फरपुर
- मैत्रेयी साहित्य संगम, सर्वे आफिस के सामने, लालबाग के०डी०एस० दरभंगा–846004
- जनार्दन थापा, लुकसान बाजार, पो. कैरन जि. जलपाईगुड़ी –735205 (प. बंगाल)
- पुस्तक–पत्रिका बिक्री–वितरण केन्द्र डिल्ली बाजार चढ़ाव के पास (निकट पदम कन्या स्कूल), काठमांडू
- विशाल पुस्तक पसल, अस्पताल लाईन, बुटवल, लुम्बनी, नेपाल
- जलजला पुस्तक सदन, धमवोजी चौक, नेपालगंज, बांके, नेपाल

डोमिनगढ़ ट्रेन दुर्घटना की असलियत

कौन देगा इस लहू का हिसाब?

रोजमर्रा की जिन्दगी हो या कोई दुर्घटना, सस्ती हमेशा ग़रीबों की ही जान हुआ करती है। विगत 18 अप्रैल की शाम को गोरखपुर के डोमिनगढ़ हाल्ट स्टेशन पर गोरखपुर-गोण्डा पैसेंजर के मालगाड़ी से टकरा जाने से जो ट्रेन दुर्घटना हुई उसकी भयंकरता का अहसास अखबारों में छपे समाचारों से कतई नहीं होता।

सरकारी आंकड़े अभी तक सिर्फ 54 लोगों की मौत और 74 लोगों के घायल होने की तस्दीक कर रहे हैं। पर घटना स्थल का जायजा लेने और आसपास रहने वाले लोगों से तथा उक्त अभागी ट्रेन के यात्रियों से बातचीत करने से पता यह चलता है कि मृतकों की संख्या तीन सौ और घायलों की संख्या इससे दूनी से कम कतई नहीं रही है।

शाम को दुर्घटना के बाद रोंगटे खड़े कर देने वाले भीषण शोर को सुनकर आसपास रहने वाली गरीबों की आबादी और नौजवान तुरत ही राहत कार्य में लग गये। इंजन के पीछे के दो डिब्बे एकदम चिपटे हो गये थे जिसके हिस्सों को गैस कटर से बाद में काट-काटकर मानव शरीर के अवशेष निकाले गये। रोने और दर्द की पुकारों से भरी उस अंधेरी काली रात को कोई भूल नहीं सकता। स्थानीय प्रशासन और रेल विभाग के लोग जो राहत कार्य के लिए आये उन्होंने सबसे पहला काम लाशें इधर-उधर करके मृतकों के आंकड़े घटाने का किया।

ग़ौरतलब बात यह है कि इस ट्रेन में यात्रा करने वाले ज्यादातर यात्री जगतबेला, सीहापार, सहजनवा आदि से रोज शहर आने वाले दिहाड़ी मजदूर, दूधवाले और रेल कर्मचारी हुआ करते हैं। मृतक रेल कर्मचारियों का तो अता-पता चल भी जायेगा पर सैकड़ों गरीब दिहाड़ी मजदूरों के घरवालों की तो इतनी भी क्षमता नहीं कि वे शहर आकर अपने आदमी की लाशें ढूंढ़ सकें या घायलों का खोज-पता कर सकें ऐसे ही लोगों का कहीं अता-पता नहीं। सरकारी राहत की नाममात्र की राशि भी भला इन गरीबों के परिवारों को क्यों मिले? आखिर गोरखपुर-गोण्डा पैसेंजर कोई शताब्दी एक्सप्रेस या राजधानी एक्सप्रेस तो थी नहीं।

बहरहाल, मामले को दबाने और जांच की खानापूर्ति का काम लगभग हो चुका है। ड्राइवर और उसके सहयोगी को गिरफ्तार और निलम्बित किया जा चुका है। ग़रीबों की सस्ती जानें गईं और बलि का बकरा भी एक गरीब बना। मामले की तह में जाने पर पता चलता है कि इस दुर्घटना और ऐसी दुर्घटना के जिम्मेदार ड्राइवर नही बल्कि यह पूरी व्यवस्था और रेल प्रशासन है। धारा (ii) और 311 (2 ab) के तहत कार्रवाई के भय से ड्राइवर अपनी वाजिब मांग भी नहीं उठा पाते। ट्रेड यूनियन नेता दलाली में ही लगे रहते हैं और जंगलराज चलता रहता है।

सिग्नल के शीशे (जिससे खासकर दिन को रंग का पता नहीं चलता और लाल रंग पीला दीखता है) समय से नहीं बदले जाते, सिग्नल का फोकस फ्लक्चुएट करता रहता है, बेहद पुरानी पटरियों को समय पर बदलने की जगह मरम्मत करके काम चलाया जाता है, ड्राइवरों के काम के घण्टे अत्यधिक हैं और परिस्थितियां बेहद तनाव पैदा करने वाली। रेल-यातायात का पूरा ताना-बाना ही चरमरा रहा है और ध्वस्त हो रहा है। ऐसे में सारा दोष ड्राईवर पर ऐसे मढ़ा जा रहा है जैसे सैकड़ों ग़रीबों की जान उसने जानबूझकर ली हो।

'बिगुल' की टीम ने जांच के दौरान कई ड्राइवरों से भी बातचीत की। इनमें से एक ड्राइवर ने बेहद गुस्से में वास्तविक स्थिति की चर्चा की और दुर्घटना का ख़तरा पैदा करने वाली स्थितियों का ब्यौरेवार खुलासा किया।

उसने अपना नाम न देने का आग्रह किया था, इसलिए हम ऐसा ही करते हुए उसकी पूरी बात उसी की भाषा में यहां दे रहे हैं। ⬇

'हत्यारी यह व्यवस्था और रेल-प्रशासन है!

ड्राइवर तो महज बलि का बकरा है'

डोमिनगढ़ ट्रेन दुर्घटना : जांच के आदेश, फिर वही आंकड़ों का चढ़ता मुलम्मा, चालक, सहचालक तथा प्वाइंटसमैन की बर्खास्तगी, मृतकों-घायलों के परिजनों को खैरातस्वरूप हजार-सौ रुपये का मुआवजा, मंत्रियों-उच्च अधिकारियों द्वारा दुर्घटना स्थल का 'निरीक्षण परीक्षण' फिर उन्हीं आंकड़ों की बाजीगरी के जरिए सरकार द्वारा मृतकों की संख्या न्यूनतम बताना, रेलवे के महाप्रबन्धक द्वारा ट्रेनों के संचालन में आधुनिकतम तकनीक के इस्तेमाल का आश्वासन....। इन सब पाटों के बीच पिसकर आम आदमी की जान हाशिये पर। उसकी कोई कीमत नहीं।

'मानवीय भूल' का सहारा लेकर जनमानस के दिलोदिमाग में व्यक्ति-विशेष (चालक या स्टेशन मास्टर या गार्ड) की गलती का अहसास कराकर जालिम व मुनाफाखोर व्यवस्था अपने असली चेहरे को छिपाने का प्रयास कर रही है।

'मानवीय भूल' और 'तकनीकी गलती' की वजह हुई दुर्घटना के कारणों के तह तक जाकर देखने से स्थिति कुछ और ही नजर आती है और रेल प्रशासन की लचर व्यवस्था की कलई एक-एक करके खुलने लगती है। जो आपके सामने है --

- ट्रेन का 'ब्रेक पावर' कागज में पूरा रहता है, जबकि ट्रेन में होता नहीं है।

- जिन पटरियों पर गाड़ियां दौड़ती हैं, वे सारी की सारी घिस चुकी हैं और जगह-जगह टूटी हुई हैं। उनकी मरम्मत पहले तकनीकी रूप से जानकार आदमी करते थे, जिन्हें हटाकर दिहाड़ी पर काम कराने वाले ठेकेदारों को लगा दिया गया है, जो अपने फायदे के लिए घटिया काम करते हैं।

- लाइनों में गच्चे पड़े हुए हैं और गाड़ियों के स्प्रिंग टेंशन समाप्त हो चुके हैं। जिनके कारण गाड़ी हिचकोले खाकर चलती है और यात्री अपनी जगह पर उछल जाते हैं।

- रेल ड्राइवरों से ड्यूटी समय-सीमा से अधिक देर तक काम लेना, आपातकाल के लिए हमेशा तैयार रहने के लिए कहना, उचित छुट्टी न देना (चाहे वह किसी विषम हालात में ही क्यों न हो), ट्रेन आने के पहले ही उस ड्राइवर की एडवांस बुकिंग करना उचित समय पर s@on (साइनिंग ऑन) न देना तथा इसके साथ ही इंजन में उचित खुराक (ल्यूब आयल, पानी आदि) न देना और मांग करने पर नौकरी से निकाल देने की धमकी देते रहना।

ऐसी मानसिक यंत्रणा की स्थिति में ड्राइवर ट्रेन चलाते समय क्या मानसिक विक्षिप्तावस्था की स्थिति में नहीं चला जायेगा? फिर कैसे दुर्घटना होने की संभावना से बचा जा सकता है।

रही बात डोमिनगढ़ ट्रेन दुर्घटना की तो इसकी पड़ताल करने पर पता चलता है कि -

1. यात्रियों की संख्या इतनी अधिक थी कि लोग डिब्बों के अन्दर खचाखच भरे हुए थे, दो डिब्बों के बीच में, छत पर और यहां तक कि ट्रेन इंजन पर सवार थे। तब यह कैसे कहा जा सकता है कि सामान्य परिस्थितियों में चालक सहायक सिगनल को देख सकता है? दैनिक यात्रियों की संख्या देखकर रेल प्रशासन ने दूसरी ट्रेन की व्यवस्था क्यों नहीं की, जबकि यह सिलसिला कई सालों से चल रहा है।

2. अधिकांशत : सिगनल फ्लक्चुएट (हरा से लाल, लाल से हरा) हो जाते हैं। सिगनल का फोकस ठीक न होने की वजह से सूरज की रोशनी में सिगनल का ठीक-ठीक पता ही नहीं चलता है। बिना जांच के यह तय कैसे हो गया कि सिगनल लाल था या हरा? चालक व सहायक क्या घर से ही दुर्घटना के मूड में चले थे या उनका शौक था? अगर आरोप लगाया जाये कि चालक शराब पीकर ट्रेन चला रहा था, तो क्या रेल विभाग ने श्वास परीक्षण यंत्र से उसकी जांच नहीं की थी?

3. अधिकांश पैसेंजर ट्रेनों का डिब्बा ओवरड्यू (डैमेज हालत में) चल रहा है। जिसकी मरम्मत अति आवश्यक थी, लेकिन उसको उसी रूप में चलाया गया (ज्ञात है कि उसी डैमेज डिब्बों में मरने वाले यात्रियों की संख्या अधिकतम थी) ऐसे डैमेज डिब्बों का इस्तेमाल रेलवे बोर्ड द्वारा संचालित ट्रेन वैशाली या राजधानी एक्सप्रेस ट्रेनों में क्यों नहीं किया जाता है? क्योंकि उसमें 'पैसे वाले' यात्री चलते हैं और पैसेंजर ट्रेनों में मेहनत-मजदूरी करने वाले मजदूर तरह के लोग चलते हैं। यानि मुनाफे को ध्यान में रखकर गाड़ियों का संचालन होता है। विदित है यह व्यवस्था नागरिकों के जान-माल की सुरक्षा की गारन्टी लेती है। लेकिन इस बात के तह में जाने पर पता चलता है कि वह सभी 'मालदार नागरिकों' की जान की सुरक्षा की गारण्टी होती है।

4. सबसे आसान है कि आम आदमी की मौत कुछ हजार रुपये में खरीद ली जाये और मरणोपरान्त उनके परिजनों को लालीपाप (हजार रुपये या नौकरी देने का लालच) देकर चुप करा दिया जाये।

5. मानवीय संवेदना को तो देखिए। जिनके परिचित मिल गये उसकी लाश पर हजार रुपये खैरात में दे दिया गया तथा जिन लाशों के बारे में पता नहीं चला या जिनके परिजन उक्त दुर्घटनास्थल पर नहीं पहुंचे तो लाशों को रेल प्रशासन व जिला प्रशासन गायब करा देते हैं ताकि हजारों रुपये की बचत हो जाये और आंकड़ों की बाजीगरी के रूप में अपने भोंपू द्वारा पेश करते हैं।

6. कुछ फैशनपरस्त समाजसेवी संस्थाएं या दुर्घटनाओं को चुनावी स्टंट बनाने वाली पार्टियां अपनी ऐशोआराम की जिन्दगी में मौतों से चार-चांद लगाते हैं और समाज पर एक 'अहसान' करते हैं। जैसे लगता है कि उनकी जिन्दगी स्वयं उनकी बपौती है।

7. लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहा जाने वाला पत्रकारों का जत्था अपने अखबार मालिकों के तलवे चाटते-चाटते या व्यक्तिगत फायदे के लिए अपनी संवेदनाओं को कुंद कर लिया है या डरपोक हो गया है। क्योंकि गरीबों-कमजोरों का साथ देने में उसके किरकिरी काटने लगती है। सच्चाई को जाने बगैर (सरकारी पक्ष कहें या ताकतवर का पक्ष) सूचना देते हैं। यह जानने की कोशिश नहीं करते कि ऐसी दुर्घटनाएं लगातार क्यों हो रही हैं? क्या सभी रेल कर्मचारी अपनी जिन्दगी यूं ही दे देना चाहते हैं? क्या यात्रियों को मरते देख उन्हें मेडल मिलता है? क्या उनकी अपनी जिन्दगी तबाह नहीं होती? वह यह जानने की कोशिश क्यों नहीं करते कि रेल प्रशासन अपने मजदूर विरोधी अधिनियम 14 (ii) 311 (2ab) जिसके द्वारा किसी भी कर्मचारी की सेवा कभी भी समाप्त की जा सकती है, के तहत कर्मचारियों के सारे अधिकार छीन कर उन्हें पंगु बना देना चाहता है।

हम सभी जागरूक, सच्चाईपसन्द व न्यायप्रिय नागरिकों से यह अपील करते हैं कि आप संजीदगी के साथ इन सभी तथ्यों का निष्पक्ष एवं सुसंगत मूल्यांकन करने के बाद तय करें कि इन ट्रेन दुर्घटनाओं का असली जिम्मेदार कौन है? इन दुर्घटना को क्या सिर्फ एक मानवीय भूल कहेंगे या इसकी जिम्मेदार मुनाफे पर टिकी यह अमानवीय व्यवस्था है?

- एक रेल ड्राइवर

मजदूर वर्ग के महान नेता और शिक्षक कार्ल मार्क्स के जन्मदिन (पांच मई) के अवसर पर

"...पूंजीपति वर्ग ने ऐसे हथियारों को ही नहीं गढ़ा है जो उसका अन्त कर देंगे, बल्कि उसने ऐसे आदमियों को भी पैदा किया है जो इन हथियारों का इस्तेमाल करेंगे – आज के मज़दूर, आज का सर्वहारा वर्ग।

जिस अनुपात में पूंजीपति वर्ग का, अर्थात पूंजी का विकास होता है, उसी अनुपात में सर्वहारा वर्ग का, आधुनिक मजदूरों के एक वर्ग का होता है जो तभी तक जिन्दा रह सकते हैं जब तक उन्हें काम मिलता जाये, और उन्हें काम तभी तक मिलता है, जब तक उनका श्रम पूंजी में वृद्धि करता है। ये मजदूर जो अपने को अलग–अलग बेचने के लिये लाचार हैं, अन्य व्यापारिक माल की तरह खुद भी माल हैं, और इसलिए वे होड़ के हर उतार–चढ़ाव तथा बाजार की हर तेज़ी–मन्दी के शिकार होते हैं।

मशीनों के विस्तृत इस्तेमाल तथा श्रम–विभाजन के कारण सर्वहाराओं के काम का वैयक्तिक चरित्र नष्ट हो गया है, और इसलिए यह काम उनके लिए आकर्षक नहीं रह गया है। मजदूर मशीन का पुछल्ला बन जाता है और उससे सबसे सरल, नीरस और आसानी से प्राप्त योग्यता की मांग की जाती है। इसलिए मजदूर के "उत्पादन" पर खर्च लगभग पूर्णतः उसके जीवन–निर्वाह और वंश वृद्धि के लिए आवश्यक साधनों तक सीमित रह गया है। लेकिन हर माल का, और इसलिए श्रम का भी दाम उसके उत्पादन में लगे हुए खर्च के बराबर होता है। अतः जिस अनुपात में काम की अरुचिकरता में वृद्धि होती है, उसी अनुपात में मजदूरी घटती है। यही नहीं, जिस मात्रा में मशीनों का इस्तेमाल तथा श्रम का विभाजन बढ़ता है उसी मात्रा में श्रम का बोझ भी बढ़ता जाता है, चाहे यह काम के घंटे बढ़ाने के जरिये हो या निर्धारित समय में मजदूरों से अधिक काम लेने या मशीन की रफ्तार बढ़ाने आदि के जरिये।

आधुनिक उद्योग ने पितृसत्तात्मक उस्ताद के छोटे–से वर्कशाप को औद्योगिक पूंजीपति के विशाल कारखाने में बदल दिया है। कारखाने में भरे झुंड के झुंड मजदूर सैनिकों की तरह संगठित किये जाते हैं। औद्योगिक फौज के सिपाहियों की तरह वे बाकायदा एक दरजावार तरतीब में बंटे हुए अफसरों और साजटों की कमान में रखे जाते हैं। वे केवल पूंजीपति वर्ग और पूंजीवादी राज्य के ही गुलाम नहीं है; बल्कि हर दिन, हर घंटे वे मशीन के, ओवरसियर के, और सर्वोपरि खुद कारखानेदार पूंजीपति के गुलाम होते हैं। यह तानाशाही जितनी ही अधिक खुलकर यह घोषित करती है कि मुनाफा ही उसका लक्ष्य और उद्देश्य है, उतनी ही अधिक वह तुच्छ, घृणित और कटु होती है।

('कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा पत्र' से लिया गया एक अंश)

मई दिवस : इतिहास के पन्नों पर

मेहनतकश वर्ग के चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न

"मेहनतकश साथियो! मई दिवस आ रहा है। वह दिन, जब तमाम देशों के मेहनतकश वर्ग चेतना की दुनिया में प्रवेश करने का जश्न मनाते हैं, इन्सान के हाथों इन्सान के शोषण और दमन के खिलाफ अपनी संघर्षशील एकजुटता का इजहार करते हैं, करोड़ों मेहनतकशों को भूख, गरीबी और जिल्लत की जिन्दगी से आजाद कराने की प्रतिज्ञा करते हैं। इस महान संघर्ष में दो दुनियाएं रूबरू खड़ी हैं – सरमाये की दुनिया और मेहनत की दुनिया, शोषण तथा गुलामी की दुनिया।

एक तरफ खड़े हैं खून चूसने वाले मुट्ठी भर अमीरो-उमरा, उन्होंने फैक्ट्रियां और मिलें, औजार और मशीनें हथिया रखी हैं, उन्होंने करोड़ों एकड़ जमीन और दौलत के पहाड़ों को अपनी निजी जायदाद बना लिया है, उन्होंने सरकार और फौज को अपना खिदमतगार बना लिया है, लूट-खसोट से इकट्ठा की हुई अपनी दौलत की रखवाली करने वाला वफादार कुत्ता। दूसरी तरफ खड़े हैं उनकी लूट के शिकार करोड़ों गरीब। वे मेहनत मजदूरी के लिए भी उन धन्ना सेठों के सामने हाथ फैलाने पर मजबूर हैं। उनकी मेहनत के बल से ही सारी दौलत पैदा होती है लेकिन रोटी के एक टुकड़े के लिए उन्हें तमाम उम्र एड़ियां रगड़नी पड़ती हैं। काम पाने के लिए भी गिड़गिड़ाना पड़ता है, कमर तोड़ श्रम में अपने खून की आखरी बूंद तक झोंक देने के बाद भी जिन्दगी भूखे पेट गुजारनी पड़ती है गांव की अंधेरी कोठरियों और शहरों की सड़ती, गन्दी बस्तियों में।

लेकिन अब उन गरीब मेहनतकशों ने दौलतमंदों और शोषकों के खिलाफ जंग का ऐलान कर दिया है। तमाम देशों के मजदूर श्रम को पैसे की गुलामी, गरीबी और अभाव से मुक्त कराने के लिए लड़ रहे हैं जिसमें साझी मेहनत से पैदा हुई दौलत से मुट्ठी भर अमीरों को नहीं बल्कि सब मेहनत करने वालों को फायदा होगा। वे जमीन, फैक्ट्रियों, मिलों और मशीनों को तमाम मेहनतकशों की साझी मिल्कियत बनाना चाहते हैं। वे अमीर-गरीब के अन्तर को खत्म करना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि मेहनत का फल मेहनतकश को ही मिले, इन्सानी दिमाग की हर उपज, काम करने के तरीकों में आया हर सुधार मेहनत करने वालों के जीवन स्तर में सुधार लाये, उसके दमन का साधन न बने।

सरमाये के खिलाफ श्रम के भीषण संघर्ष में सब देशों के मजदूरों को अनेक कुर्बानियां देनी पड़ी हैं। बेहतर जीवन और वास्तविक आजादी के अधिकार के लिए लड़ते हुए उनके खून के दरिया बहे हैं। जो मजदूरों के हित में लड़ते हैं उन्हें हुकूमतों के बर्बर अत्याचार झेलने पड़ते हैं, लेकिन इतने जुल्मो-सितम के बावजूद दुनिया भर के मजदूरों की एकता बढ़ रही है और मजबूत हो रही है। समाजवादी विचारधारा वाली पार्टियों के परचम तले मजदूर इकट्ठा हो रहे हैं। ऐसी पार्टियों के हिमायतियों की संख्या करोड़ों में पहुंच रही है और वे लगातार, कदम-ब-कदम सरमायेदार शोषक वर्ग पर सम्पूर्ण विजय की ओर बढ़ रहे हैं।"

(रूसी क्रान्ति के महान नेता लेनिन ने 1904 में मई दिवस के अवसर पर यह पर्चा लिखा था।)

मई दिवस अमर रहे

"पिछली शताब्दी में ही पूरी दुनिया के मजदूरों ने पहली मई को अपने खास त्योहार की तरह मनाने का फैसला कर लिया था। यह बात है पहली मई, 1886 की – जिस दिन प्रकृति सर्दियों की नींद से जागती है, जंगल और पहाड़ हरा चोला ओढ़ते हैं और मैदान और चरागाहें फूलों से अपना श्रृंगार करती हैं, सूरज पूरी धरती पर हल्की-हल्की गर्मी बरसाता है, नई जिन्दगी की खुशी हवाओं में फैल जाती है और प्रकृति नाचने और खुशियां मनाने लगती है – ठीक इसी दिन, यानि पहली मई को, समाजवादियों की पैरिस कांग्रेस में दुनिया भर के मजदूरों ने सरे-आम, बुलंद आवाज में यह ऐलान किया कि मजदूर पूरी मानवजाति के लिए बसन्त ला रहे हैं, पूंजीवाद की बेड़ियों से मुक्ति का संदेसा ला रहे हैं, अब मजदूरों ने पूरी दुनिया को आजादी और समाजवाद के आधार पर नये सिरे से रचने की ठानी है।

"हर वर्ग के अपने खास त्योहार होते है। राजे-रजवाड़ों ने अपने त्योहार बनाये जिन पर वे किसानों को लूटने के अपने "जन्मसिद्ध अधिकार" की घोषणा करते हैं। सरमायेदारों के अपने त्योहार होते हैं जिनपर वे मजदूरों का शोषण करने के अपने "अधिकार" को दोहराते हैं। धर्माधिकारियों के भी अपने त्योहार होते हैं जिनपर वे वर्तमान व्यवस्था के गुणगान करते हैं, जिस व्यवस्था में मेहनतकश बेकार और भूखे मरते हैं।

"मजदूर भी अपना त्योहार मनायेंगे जिसपर वे सबके लिए काम, आजादी और समानता का ऐलान करेंगे। वह त्योहार है पहली मई का त्योहार।

"1889 में मजदूरों ने यही प्रण लिया था।

"तब से मजदूरों के समाजवाद का जंगी नारा जुलूसों और जलसों में तेज से तेजतर होता गया है। मजदूर आंदोलन का सागर बढ़ता ही जा रहा है। नये देशों, नये राज्यों में यूरोप और अमरीका से एशिया, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया तक। कुछ दशकों के छोटे से समय में ही उस कमजोर सी लगने वाली अन्तरराष्ट्रीय मजदूर गोष्ठी ने एक ऐसे बलवान, अंतरराष्ट्रीय एकजुटता वाले संगठन का रूप धारण कर लिया है जो नियमित कांग्रेसे करता है और दुनिया के हर भाग में मजदूरों को एकत्रित करता है। सर्वहारा के आक्रोश के समुद्र में गगनचुम्बी लहरें उठ रही हैं और वह लगातार पूंजीवाद के डगमगाते किले की तरफ बढ़ रहा है। ...

"हम दौलत के पुजारी नहीं हैं। हमें सरमायेदारों और जालिमों की सल्तनत नहीं चाहिए। हम पूंजीवाद और उससे जन्मी खौफनाक गरीबी और खून-खराबे का विनाश चाहते हैं। मजदूरराज जिन्दाबाद! समाजवाद जिन्दाबाद!" "...इस दिन तमाम देशों के वर्ग-सचेतन मजदूर यही घोषणा करते हैं। अंतिम जीत में विश्वास से भरे, शांति और मजबूती के साथ, वे सीना ताने अपनी मंजिल की तरफ बढ़े चले जा रहे हैं, शानदार समाजवाद की ओर, कदम-कदम पर कार्ल मार्क्स की इस घोषणा को अमल में लाते हुए : 'दुनिया के मजदूरों, एक हो'!"

(दुनिया के पहले मजदूर राज के मजबूत नेता और महान क्रान्तिकारी स्तालिन द्वारा 1912 में लिखे पर्चे से)

भारत में मई दिवस और मजदूर संघर्षों की परम्परा

दुनियां के अन्य मुल्कों की तरह हमारे मुल्क में भी मज़दूरों के जुझारू संघर्ष की शानदार परम्परा रही है। आज भले ही बेमिसाल कुर्बानियों से भरे इतिहास के इन पन्नों पर धूल और राख की पर्त जमा हो गयी हो और संघर्ष रूका सा प्रतीत हो रहा हो, लड़ाई आज भी जारी है और वह तब तक जारी रहेगा जब तक लूट पर टिकी यह पूंजीवादी व्यवस्था कायम है। यदि धरती की छाती पर कान लगाकर सुनने का प्रयास करें तो हमें आज भी इन संघर्षों की गड़गड़ाहट सुनाई देगी।

आज एक बार फिर जब हम नयी क्रान्तियों की तैयारी में जुटे हैं तो हमें अतीत के अपने संघर्षों से परिचित होना होगा, इतिहास के स्वर्णिम पन्नों को पलटना होगा। मई दिवस के अवसर पर पुनः हम अपने क्रान्तिकारी विरासत को प्रेरणा का स्रोत बनाना चाहते हैं।

आठ घण्टे काम के लिए संघर्ष

हो सकता है कि बहुतेरे साथी इस बात से परिचित न हों कि काम के घण्टे आठ करने का कानूनी हक हासिल करने में 90 वर्षों के संघर्षों का शानदार इतिहास रहा है। आइए इतिहास के इन पन्नों पर एक नजर दौड़ाएं।

भारतीय इतिहास में मजदूरों के छोटे-छोटे आन्दोलनों - हड़तालों का जिक्र काफी पहले से मिलता है। इनमें कलकत्ता में पालकी ढोने वाले मजदूरों के हड़ताल का जिक्र प्रमुख है। लेकिन पहली बार 1862 में काम के घण्टे आठ करने के लिए हावड़ा के रेल मजदूरों ने हड़ताल की थी। काम के घण्टे कम करने की मांग को लेकर दुनिया के पैमाने पर यह पहली हड़ताल थी। इसमें 1200 मजदूरों ने भाग लिया था। इसी दौर में बंगाल के मजदूरों ने, मजदूरों के पहले अंतरराष्ट्रीय संगठन 'प्रथम इण्टरनेशनल' से सम्पर्क करने की कोशिश भी की थी। यही नहीं, यहां के एक मजदूर ने, विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन के महान शिक्षक एंगेल्स को पत्र भी लिखा था। यह मजदूरों के विश्वव्यापी एकजुटता की पहली और शानदार मिसाल है।

भारत के मजदूरों ने अपने संघर्षों से पहली जीत 1881 में हासिल की थी जब पहला फैक्ट्री कानून बना। इस कानून द्वारा सात साल से कम उम्र के बच्चों से काम करवाने पर प्रतिबंध लगाया गया। उस समय औरत और मर्द दोनों के लिए काम का समय सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक था। खाने-पीने के लिए भी अवकाश की गुजाइश नहीं थी।

सितम्बर 1884 में बम्बई के कपड़ा मजदूरों ने एक विराट सभा की जिसमें महिलाएं भी शामिल थीं। सभा के माध्यम से काम के घण्टे कम करने, साप्ताहिक अवकाश, दोपहर में खाने की छुट्टी और घायलों के लिए मुआवजे की व्यवस्था की मांग उठायी गयी। इन मांगों के समर्थन में लगातार होने वाले आन्दोलनों ने मालिकों को 1891 में एक नया फैक्ट्री कानून बनाने के लिए बाध्य किया जिसे 50 या उससे अधिक श्रमिकों वाले फैक्ट्रियों में लागू किया गया।

इस नए कानून में बाल श्रमिकों की न्यूनतम आयु सीमा सात से बढ़ाकर नौ वर्ष कर दी गयी और उनके लिए 9 घण्टे काम का समय निर्धारित हुआ। इसी कानून में महिलाओं के लिए काम की समय सीमा 11 घण्टे रखा गया और उन्हें रात्रिकालीन शिफ्टों में काम करवाये जाने पर प्रतिबंध लगा दिया

गया। पुरुषों के काम के घण्टे तो अभी तय नहीं हुए लेकिन भोजन अवकाश के तौर पर आधे घण्टे छुट्टी मंजूर की गयी। इसी कानून से साप्ताहिक छुट्टी का भी अधिकार मिला।

फिर भी काम की परिस्थितियां विकट थीं और मालिकों द्वारा शोषण जारी था, जिसके खिलाफ संघर्ष भी जारी रहा। अब एक नयी बात यह हुई कि मजदूरों ने राजनीतिक गतिविधियों में भी भाग लेना शुरू कर दिया। 1908 में जब उग्र राष्ट्रवादी नेता बाल गंगाधर तिलक को, उनके अपने अखबार में प्रकाशित एक लेख के लिए छह वर्षों के लिए जेल भेजा गया तो बम्बई के कपड़ा मजदूरों ने आम हड़ताल की घोषणा कर दी। यह मजदूरों की पहली बड़ी राजनीतिक कार्यवाई थी।

मजदूरों के लगातार जुझारू संघर्षों के कारण 1911 में फैक्ट्री कानून में पुनः संशोधन हुआ। इस बार पुरुष कामगारों के लिए 12 घण्टे और बाल श्रमिकों के लिए 6 घण्टे का समय तय किया गया। यह कानून केवल कपड़ा मजदूरों पर ही लागू था। मजदूरों ने एक बड़ी जीत 1922 में हासिल की जब ब्रिटिश हुक्मरानों को एक नया फैक्ट्री कानून बनाने पर बाध्य होना पड़ा।

1922 के कानून का लाभ बिजली से चलने वाले और 20 या उससे अधिक मजदूरी वाले सभी कारखानों के श्रमिकों को मिला। जिसके तहत काम के घण्टे को रोजाना ग्यारह और सप्ताह में 60 घोषित किया गया। तथा सामान्य वेतन के सवागुना दर से ओवरटाइम देना भी निश्चित किया गया। इसके बाद भी अपने संघर्षों की बदौलत श्रमिक वर्ग छिटपुट सहूलियतें तो हासिल करता रहां लेकिन काम के आठ घण्टे का अधिकार कानूनी तौर पर विदेशी गुलामी से मुक्ति के बाद 1948 में ही हासिल हो सका।

1948 में आठ घण्टे के कानूनी अधिकार के मिल जाने के बावजूद तमाम सेक्टर ऐसे बचे रह गये थे जहां मजदूरों को आठ घण्टे से ज्यादा खटना पड़ रहा था। अभी भी रोडवेज और रेलवे रनिंग स्टाफ के मजदूरों को 13-13 घण्टे से ज्यादा खटना पड़ता है। लगातार उन्नत होते जा रहे विज्ञान और तकनोलाजी की बदौलत जहां काम के घण्टे और कम होने चाहिए वहां वर्तमान में लागू हो रहे नयी आर्थिक नीतियों के तहत मजदूर संघर्षों से प्राप्त अधिकारों को भी छीने जाने का प्रयास किया जा रहा है।

भारत में मई दिवस

हमारे मुल्क में संगठित तौर पर मई दिवस मनाने की परम्परा की शुरुआत 1923 से हुई। 1923 में मद्रास के इस पहले समारोह में ही मई दिवस को श्रमिकों के लिए छुट्टी का दिन घोषित करने की मांग उठायी गयी थी। 1925 में लन्दन के ईस्ट एण्ड में रहने वाले भारतीय नाविकों ने हाइड पार्क में सभा करके मई दिवस मनाया था, जबकि 1926 में लाहौर के तांगा मजदूरों ने इसे अपने ढंग से मनाया।

1927 में भारत में गठित मजदूरों के पहले ट्रेड यूनियन एटक के आह्वान पर, कलकत्ता, मद्रास और बम्बई में बड़े उत्साह के साथ इसे श्रमिक दिवस के रूप में मनाया गया और कुछ स्थानों पर लाल झण्डे के साथ प्रदर्शन भी हुआ। उस वक्त मई दिवस मनाने पर प्रतिबंध भी लगाये जाते थे और मजदूरों को सरकारी दमन का भी सामना करना पड़ता था। मेरठ षडयंत्र के अभियुक्तों पर 1927 और 1928 में मई दिवस समारोह में भाग लेने और 'दुनिया के मजदूरों एक हो' का नारा लगाने का भी आरोप था।

1928 में कलकत्ता में मई दिवस मनाने पर तत्कालीन हुकूमत द्वारा प्रतिबंध भी लगा दिया गया था। इसके बावजूद कलकत्ता में ही एक मील लम्बी जुलूस निकाला गया और एक विशाल सभा का आयोजन किया गया। तब से मई दिवस को मजदूरों के त्योहार के रूप में - अपने मुक्तिकामी संघर्ष के प्रेरणा दिवस के रूप में मनाया जाता रहा है।

आज, भले ही मई दिवस को सरकारी अनुष्ठान बना देने और कुछ रस्मी कवायदें कर लेने की कोशिशें हो रही हों, श्रमिक वर्ग इसे अपना त्योहार भी मानता है और प्रेरणा का स्रोत भी।

मई दिवस को सार्वजनिक अवकाश घोषित करो!

मई दिवस मजदूरों का सबसे महत्वपूर्ण त्योहार है।

यह मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को अंतिम तौर पर समाप्त करने के लिए चलने वाले संघर्ष में नई जान डालने का दिन है, शानदार सपनों को सच्चाई में बदलने के लिए नये संकल्प लेने का दिन है। पूंजी और श्रम के बीच चल रहे महासमर में श्रम की विजयी शक्ति प्रदर्शित करने का दिन है। अतीत का कोई भी त्योहार इसकी जगह नहीं ले सकता। सर्वहारा की बड़ी कुर्बानियों के बाद इस दिन को पूंजीपति वर्ग ने छुट्टी देना स्वीकार किया है। विश्व के अधिकांश देशों के सर्वहारा को आज पहली मई की छुट्टी का अधिकार प्राप्त है।

भारत का मजदूर वर्ग, जिसने देश की आजादी के लिए बेहिसाब कुर्बानियां दी थीं और समाज के अन्य वर्गों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर अंग्रेजों के खिलाफ लड़ा था, उसे आजादी के बाद से आज तक यह अधिकार नहीं मिला। भारत का शासक वर्ग हमेशा किसी न किसी बहाने मजदूरों की इस मांग को टालता ही रहा। स्थापित ट्रेड यूनियनें भी इस मांग के लिए उचित दबाव न बना सकीं। दरअसल ज्यादातर यूनियनों के लिए यह एक रस्म निभाने भर से ज्यादा नहीं रह गया है। यदि देश की सरकार पहली मई को छुट्टी नहीं देती तो क्यों नहीं, तमाम हड़तालों में एक हड़ताल पहली मई को की जाती है? या क्यों नहीं, कम से कम सभी यूनियनें मिलकर पहली मई को सामूहिक अवकाश लेने का नारा देती हैं? कारण साफ है, वे भी मजदूर वर्ग की वर्गीय चेतना एवं मांगों से डरती हैं।

आखिर हम कब तक सत्ताधारियों का ही त्योहार मनायेंगे? अपना त्योहार, पहली मई, मजदूर दिवस को शान से मनाने का अधिकार हासिल करने के लिए हमें लड़ना पड़ेगा। आइए, आज हम पूरी शक्ति के साथ घोषणा करें -

पहली मई को सार्वजनिक अवकाश घोषित करो।

भारतीय सर्वहारा की प्रथम राजनीतिक हड़ताल

1908 में बाल गंगाधर तिलक को अपने समाचार पत्र में प्रकाशित एक लेख के लिए छः वर्ष कारावास की सजा मिली। तिलक की गिरफ्तारी पर बम्बई के कपड़ा मजदूरों ने आम हड़ताल की। यह भारतीय सर्वहारा की पहली राजनीतिक कार्रवाई थी। लेनिन ने जो उन दिनों जेनेवा में निर्वासित थे, इसे लक्षित किया और निम्नलिखित शब्दों में उसका अभिनन्दन किया :

"भारतीय जनवादी तिलक को अंग्रेज सियारों ने जो कुख्यात सजा दी है - उन्हें लम्बे काल के लिए निर्वासन की सजा दी गयी थी, जिसके संबंध में पिछले दिनों ब्रिटेन की हाउस आफ कामन्स में पूछे गये प्रश्न ने यह तथ्य उजागर किया है कि भारतीय जूरियों ने उन्हें रिहा करने की घोषणा की पर सजा ब्रिटिश जूरियों के वोट से दी गयी है! -- धनवानों के जूते चाटने वालों ने एक जनवादी के खिलाफ जो यह बदला लिया उसकी वजह से बम्बई में सड़कों पर प्रदर्शन हुए और हड़तालें हुईं। भारत में भी सर्वहारा सचेत राजनीतिक जनसंघर्ष तक विकसित हो चुका है और यदि यही मामला रहा तो भारत में रूसी तरीके के ब्रिटिश शासन का विनाश निश्चित है।"

नारी सभा

मई दिवस के अवसर पर

अपने संघर्ष के दौरान मजदूर वर्ग ने बहुतेरे नायक पैदा किये हैं जिन्होंने शानदार संघर्षों में अपने वर्ग भाइयों का नेतृत्व किया है और बेमिसाल कुर्बानियां दी हैं। मई दिवस के नायक इन्हीं नायकों में से हैं। शिकागो के मजदूरों का नेता अल्बर्ट पार्सन्स, जिसे पहले मई दिवस का नेतृत्व करने के लिए पूंजीपति वर्ग ने उसके तीन कामरेडों सहित फांसी दे दी थी, ऐसा ही एक नायक था। मजदूर वर्ग की यादों में अब वह मात्र एक व्यक्ति के रूप में नहीं सुरक्षित है। वह अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा के संघर्ष का प्रतीक बन चुका है, उसी तरह, जैसे हमारे देश में भगतसिंह औपनिवेशिक काल के दौरान भारतीय जनता के क्रान्तिकारी संघर्षों का प्रतीक बन गये हैं।

हम यहां अल्बर्ट पार्सन्स द्वारा फांसी से एक दिन पूर्व अपने बच्चों के लिए लिखा गया पत्र और उसकी पत्नी लूसी पार्सन्स द्वारा अदालत के सामने दिये गये बयान को प्रकाशित कर रहे हैं। सर्वहारा और पूंजीपति दोनों के परस्पर विरोधी जीवन मूल्यों की इस बयान और पत्र में एक स्पष्ट झलक दिखायी देती है। — सम्पादक

लूसी पार्सन्स का बयान

"जज एल्टजेल्ड, क्या आप इस बात से इन्कार करेंगे कि आपके जेलखाने गरीबों के बच्चों से भरे हुए हैं अमीरों के बच्चों से नहीं? क्या आप इन्कार करेंगे कि आदमी इसलिए चोरी करता है क्योंकि उसका पेट खाली होता है? क्या आपमें यह कहने का साहस है कि वे भूली-भटकी बहनें, जिनकी आप बात करते हैं, एक रात में दस से बीस व्यक्तियों के साथ सोने में प्रसन्नता महसूस करती हैं, अपनी अंतड़ियों को दगवाकर बहुत खुश होती हैं?"

समूचे हाल में विरोध का शोर गूंजने लगा : "शर्मनाक" और "घृणास्पद" की आवाजें उठने लगी। एक पादरी उठा और आवेश से कांपते हुए अपने छाते को जोर-शोर से हिलाकर उसने जज से हस्तक्षेप के लिए कहा। दूसरों ने भी शोर किया । परन्तु जज एल्टजेड ने, जैसा कि अगले दिन अखबारों ने भी लिखा, प्रशंसनीय ढंग से आचरण किया। उसने अपने हाथ के संकेत से शोर-शराबे को शान्त किया। उसने व्यवस्था का आदेश दिया और उसे लागू किया। उसने कहा, "एक महिला मंच पर है। क्या हम इतने उद्दण्ड होकर नम्रता की धज्जियां उड़ायेंगे?" फिर श्रीमती पारसन्स की ओर मुड़ते हुए उसने कहा, "कृपया आप अपना वक्तव्य समाप्त करें, श्रीमती पारसन्स, और तब यदि आप चाहेंगी तो मैं आपको उत्तर दूंगा।"

तो यह थी बहुचर्चित लूसी पारसन्स! हाल में फुसफुसाहट हुई और श्रीमती पारसन्स ने, जो इस पूरे दौर में दृढ़तापूर्वक खड़ी रही थी, बोलना शुरू किया: "आप सब लोग लोगों का, जो सुधार की बातें करते हैं, सुधार का उपदेश देते हैं और सुधार की गाड़ी पर चढ़कर स्वर्ग तक पहुंचना चाहते हैं, दृष्टिकोण क्या है? जज एल्टजेल्ड कैदियों के लिए धारीदार पोशाक की जगह भूरे सूट की वकालत करते हैं। वे रचनात्मक कार्य, अच्छी पुस्तकों और हवादार, साफ-सुथरी कोठरियों की वकालत करते हैं। निश्चय ही उनका यह कहना सही है कि कठोर दण्ड पाये कैदियों को पहली बार अपराध के लिए सजा भुगतने वाले कैदियों से अलग रखा जाना चाहिए। वे एक जज हैं और इसलिए मुझे आश्चर्य नहीं होता जब वे न्याय के पक्ष में ढेर सारी बातें करते हैं क्योंकि यदि किसी चीज का अस्तित्व नहीं भी है तो भी उसकी चर्चा अवश्य होनी चाहिए। नहीं, मैं जज एल्टजेल्ड की आलोचना नहीं कर रही हूं। मैं उनसे सहमत हूं जब वे यंत्रणा की भयावहता के विरुद्ध आवाज उठाते हैं। एक बार नहीं, अनेकों बार मैंने यातनाएं सहन की हैं। मेरे शरीर पर उसके ढेरों चिन्ह हैं। लेकिन मैं तुम्हारे सुधारों के झांसे में नहीं आती। यह तुम्हारा समाज है, जज एल्टजेल्ड। तुम लोगों ने इसे बनाया है और यही वह समाज है जो अपराधियों को जन्म देता है। एक स्त्री अपना शरीर बेचने लगती है क्योंकि यह भूखे मरने की तुलना में थोड़ा बेहतर है। एक व्यक्ति चोर बन जाता है क्योंकि तुम्हारी व्यवस्था उसे कानून तोड़ने वाला घोषित करती है। वह तुम्हारे नीति शास्त्र को देखता है जो कि जंगली जानवरों के आचार का शास्त्र है और तुम उसे जेलखाने में ठूंस देते हो क्योंकि वह तुम्हारे आचार-व्यवहार का पालन नहीं करता है। और यदि मजदूर संगठित होकर रोटी के लिए संघर्ष करते हैं, एक बेहतर जिन्दगी के लिए लड़ाई लड़ते हैं, तुम उन्हें भी जेल भेज देते हो और अपनी आत्मा को सन्तुष्ट करने के लिए सुधार की बात करते हो, हमेशा सुधार की। नहीं, जज एल्टजेल्ड, जब तक तुम इस व्यवस्था की, इस नीतिशास्त्र की हिफाजत करते रहोगे, तुम्हारी जेलों की कोठरियां हमेशा ऐसे स्त्री-पुरुषों से भरी रहेंगी जो मौत की अपेक्षा जीवन चुनेंगे -- वह अपराधी जीवन जो तुम उन पर थोपते हो।"

कालकोठरी नम्बर-7, कुक काउण्टी जेल शिकागो,
9 नवम्बर, 1887

मेरे प्यारे बच्चो

अल्बर्ट आर. पार्सन्स (जूनियर) और बेटी लुलु एडा पार्सन्स

मैं ये शब्द लिख रहा हूं और मेरे आंसू तुम्हारा नाम मिटा रहे हैं। हम फिर कभी नहीं मिलेंगे। मेरे प्यारे बच्चों, तुम्हारा पिता तुम्हें बहुत प्यार करता है। अपने प्रियजनों के प्रति प्यार को हम उनके लिए जी कर प्रदर्शित करते हैं और जब आवश्यकता होती है तो उनके लिए मर कर भी। मेरे जीवन और मेरी अस्वाभाविक और क्रूर मृत्यु के बारे में तुम दूसरे लोगों से जान लोगे। तुम्हारे पिता ने स्वाधीनता और प्रसन्नता की वेदी पर अपनी बलि दी हैं तुम्हारे लिए मैं एक ईमानदारी और कर्तव्यपालन की विरासत छोड़ रहा हूं। इसे बनाये रखना, इसका अनुकरण करना। अपने प्रति सच्चे बनना, तुम किसी अन्य के प्रति कभी दोषी नहीं हो पाओगे। परिश्रमी, गम्भीर और हंसमुख बनना। और तुम्हारी मां! वह बहुत महान है। उसे प्रेम करना, उसका आदर करना और उसकी आज्ञा पालन करना।

मेरे बच्चो! मेरे प्यारो! मैं आग्रह करता हूं कि इस विदाई सन्देश को मेरी प्रत्येक बरसी पर पढ़ना, एक ऐसे इन्सान की याद में जो सिर्फ तुम लोगों के लिए ही नहीं वरन् भविष्य की आने वाली पीढ़ियों के लिए कुरबान हुआ।

खुश रहो, मेरे प्यारो! विदा!

तुम्हारा पिता
अल्बर्ट आर. पारसन्स

अन्तरराष्ट्रीय मजदूर दिवस का सन्देश —

उठो, संग्रामियो, जागो! नई शुरुआत करने का समय फिर आ रहा है!

(पेज 1 से आगे)

हमें एक नई क्रान्तिकारी शुरुआत के लिए मजदूर वर्ग की इंकलाबी, फौलादी बिरादराना एकता को फिर से बहाल करने की शपथ लेनी होगी।

हमें मजदूर वर्ग की एकता को खोखला और कमजोर करने वाले अंधराष्ट्रवाद, क्षेत्रीयतावाद, जातिवाद और धार्मिक कठमुल्लेपन की जड़ खोद देने की शपथ लेनी होगी।

हमें शपथ लेनी होगी कि हम सभी दुनिया भर के संपत्तिहीन, दुनिया भर के मजदूर एक हैं और हमारा लक्ष्य एक है और वह है — दुनिया से पूंजीवाद का नाश!

- ट्रेड यूनियन आन्दोलन के क्रान्तिकारी पुनरुत्थान के लिए कमर कस लो!
- मजदूर एकता को फौलादी बनाओ!
- अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण की रचना के लिए एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी के निर्माण मे जी-जान से लग जाओ!!

हमें मजदूर वर्ग की सिर्फ आंशिक मांगों, मात्र बोनस, ओवरटाइम या वेतनवृद्धि जैसी आर्थिक मांगों से आगे बढ़कर व्यापक आर्थिक और राजनीतिक मांगों को उठाना होगा और उसे राजनीतिक सत्ता के लिए क्रान्तिकारी संघर्ष की कड़ी बनाना होगा। जैसा कि लेनिन ने कहा था, काम के घण्टे कम करने की मांग "समूचे सर्वहारा वर्ग की मांग है, जो अलग-अलग मालिकान के सामने नहीं बल्कि समूचे मौजूदा सामाजिक तथा राजनीतिक ढांचे के प्रतिनिधि के रूप में शासक अधिकारियों के सामने, समूचे पूंजीपति वर्ग के सामने, उत्पादन के सारे साधनों के मालिकों के सामने उठाई जाती है।" हमें मजदूर आंदोलन को ऐसी ही क्रान्तिकारी धार देने की शपथ लेनी होगी, सभी धंधेबाज दलाल ट्रेड यूनियन नेताओं को कनेठी लगाकर भगाना होगा और नया इंकलाबी नेतृत्व तैयार करना होगा।

हमें आर्थिक नवउपनिवेशवाद के इस नये दौर में दुनिया भर के साम्राज्यवादियों के छुटभैया बन चुके देशी पूंजीपति लुटेरों की हुकूमत के खिलाफ नई समाजवादी क्रान्ति की तैयारी में अपना मिनट-मिनट का समय लगा देने की शपथ लेनी होगी।

हमें सर्वहारा के बिखरे हुए क्रान्तिकारी हरावल दस्तों को इकट्ठा करके फिर से पूरे देश के पैमाने पर एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी बनाने के लिए जान लड़ा देने की शपथ लेनी होगी।

अंत में हम एक बार फिर लेनिन के शब्दों का ही इस्तेमाल करते हुए एक निर्णायक युद्ध में प्रवेश के लिए मजदूरों का आह्वान करते हैं, **"मजदूर साथियो, आइये हम सामने खड़े निर्णायक युद्ध के लिए दुगुनी ऊर्जा से तैयारी करें। सामाजिक जनवादी (यानी कम्युनिस्ट) सर्वहारा की कतारें ज्यादा से ज्यादा सजने दो! उनका संदेश ज्यादा से ज्यादा दूर तक फैलने दो। मजदूरों की मांगों के लिए प्रचार को ज्यादा से ज्यादा निर्भीकता से चलाओ। मई दिवस का आयोजन हमारे लक्ष्य के लिए हजारों नये योद्धा जीते और सभी जनगणों की स्वतंत्रता के लिए, सभी मेहनत करने वालों को पूंजीवाद के जुवे से मुक्ति दिलाने के महान संघर्ष में, हमारी कतारें बढ़ती जायें"** (मई दिवस का पर्चा, 1904)

हमारी भी यह कामना है। हमारा भी यही विश्वास है। हमारा भी यही संकल्प है।

जुआ-शराब...जाति-धरम...किस्मत-करम...
घुनाव से बदलाव का भरम...
बस दुअन्नी-चवन्नी के लिए रिरियाने वाले
ट्रेड यूनियनवाद में उलझे रहना...
यह सब क्या है?

मज़दूर साथियो!
रोज-रोज तुम अपनी ही कब्र खोदते रहोगे
तो पूंजीवाद की कब्र कौन खोदेगा?

मजदूर साथियो!
बग़ावत जायज़ है!
बग़ावत करो!
बग़ावत से इंकलाब की ओर आगे बढ़ो!

उठो जागो गाओ गान
बहाओ आंधी खड़ा करो तूफान
नई सुबह की सुर्ख किरण में
झिलमिल कर लो प्राण

यदि हम नहीं लड़ते,
यदि हम लड़ते नहीं जाते
तो दुश्मन अपनी संगीनों से
हमें खत्म कर देगा
और फिर हमारी हड्डियों की
ओर इशारा करके कहेगा
देखो, ये गुलामों की हड्डियां हैं
गुलामों की

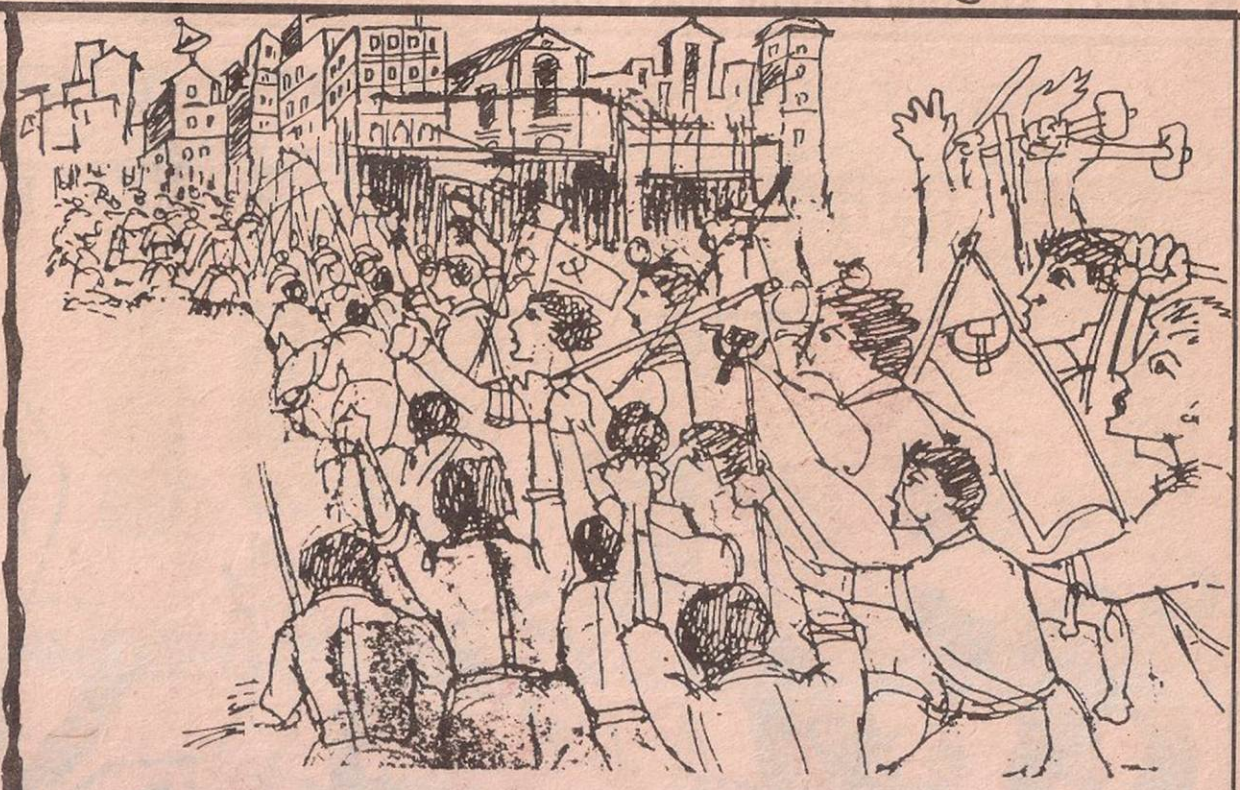

जश्न बपा है कुटियाओं में ऊंचे ऐवां कांप रहे है

● *साहिर लुधियानवी*

जश्न बपा है कुटियाओं में ऊंचे ऐवां[1] कांप रहे हैं
मज़दूरों के बिगड़े तेवर देख के सुल्तां कांप रहे हैं।

जागे हैं अफलास[2] के मारे उट्ठे हैं बेबस दुखियारे
सीने में तूफां का तलातुम[3] आंखों में बिजली के शरारे।

चौक-चौक पर गली-गली में सुर्ख फरेरे लहराते हैं
मजलूमों के बाग़ी लश्कर सैल-सिफत[4] उमड़े आते हैं।

शाही दरबारों के दर से फौजी पहरे ख़त्म हुए हैं
ज़ाती जागीरों के हक़ और मोहमल[5] दावे खत्म हुए हैं।

शोर मचा है बाजारों में टूट गये दर जिंदानों[6] के
वापस मांग रही है दुनिया ग़सबशुदा[7] हक इंसानों के।

रुसवा बाज़ारी खातूनें हक़े-निसाई[8] मांग रही हैं
सदियों की ख़ामोश जुबानें सहरनवाई[9] मांग रही हैं।

रौंदी कुचली आवाजों के शोर से धरती गूंज उठी है
दुनिया के अन्याय नगर में हक की पहली गूंज उठी है।

जमा हुए हैं चौराहों पर आकर भूखे और ग़दागर[10]
एक लपकती आंधी बनकर एक भभकता शोला होकर

कांधों पर संगीन कुदालें, होठों पर बेबाक तराने
दहकानों के दल निकले हैं अपनी बिगड़ी आप बनाने।

आज पुरानी तदबीरों से आग के शोले थम न सकेंगे
उभरे जज़्बे दब न सकेंगे उखड़े परचम जम न सकेंगे।

राजमहल के दरबानों से ये सरकश तूफां न रुकेगा
चंद किराये के तिनकों से सैले-बेपायां[11] न रुकेगा।

कांप रहे हैं ज़ालिम सुल्तां टूट गये दिल जब्बारों[12] के
भाग रहे हैं ज़िल्ले इलाही मुंह उतरे हैं गद्दारों के।

एक नया सूरज चमका है एक अनोखी ज़ौबारी[13] है
खत्म हुई अफ़रात की शाही[14] अब जम्हूर की सालारी[15] है।

1. ऐवां — महल 2. अफलास — गरीबी 3. तलातुम — उथल-पुथल 4. सैल-सिफत — सैलाब की तरह 5. मोहमल — बेकार 6. जिंदान — जेल 7. ग़सबशुदा — हड़पे हुए 8. हक़े निसाई — नारी का अधिकार 9. सहरनवाई — सुबह के मीठे गीत 10. गदागर — भिखारी 11. सैले बेपायां — अथाह सैलाब 12. जब्बार — अत्याचारी 13. ज़ौबारी — प्रकाश की वर्षा 14. अफ़रात की शाही — मुट्ठीभर लोगों की हुकूमत 15. जम्हूर की सालारी — जनता का शासन

''हजारों शहीद बड़ी बहादुरी के साथ जनता के लिए अपनी जिन्दगी निछावर कर चुके हैं; आइए, हम उनका झण्डा बुलन्द रखें तथा उनके खून से सींचे हुए रास्ते पर आगे बढ़ते जायें!''

— माओ त्से-तुङ

मई 1886 का वह रक्तरंजित दिन

जब मजदूरों के बहते खून से पैदा हुआ उनका लाल झण्डा

4 मई 1886 : अमरीका के शिकागो शहर का हे मार्केट स्क्वायर : पुलिस की गोलियों से घायल मजदूरों ने अपने खून से रंगे कपड़ों को ही परचम बना लिया और मजदूरों का लाल झण्डा पैदा हुआ

मजदूरों का त्योहार मई दिवस आठ घण्टे काम के दिन के लिए मजदूरों के शानदार आन्दोलन से पैदा हुआ। उसके पहले मजदूर चौदह से लेकर सोलह-सोलह घण्टे तक खटते थे। सारी दुनिया में अलग-अलग इस मांग को लेकर आन्दोलन होते रहे थे। अपने देश में भी 1862 में ही मजदूरों ने इस मांग को लेकर कामबन्दी की थी। लेकिन पहली बार बड़े पैमाने पर 1886 में अमेरिका के विभिन्न मजदूर संगठनों ने मिलकर आठ घण्टे काम के दिन की मांग पर एक विशाल आन्दोलन खड़ा करने का फैसला किया।

एक मई 1886 को पूरे अमेरिका के लाखों मजदूरों ने एक साथ हड़ताल शुरू की। इसमें 11000 फैक्टरियों के कम से कम तीन लाख अस्सी हजार मजदूर शामिल थे। शिकागो महानगर के आसपास सारा रेल यातायात ठप्प हो गया और शिकागो के ज्यादातर कारखाने और वर्कशाप बन्द हो गये। शहर के मुख्य मार्ग मिशिगन एवेन्यू पर अल्बर्ट पार्सन्स के नेतृत्व में मजदूरों ने एक शानदार जुलूस निकला।

उधर मजदूरों की बढ़ती ताकत और उनके नेताओं के अडिग संकल्प से भयभीत उद्योगपति लगातार उनपर हमला करने की घात में थे। सारे के सारे अखबार (जिनके मालिक पूंजीपति थे) "लाल खतरे" के बारे में चिल्ल-पों मचा रहे थे। पूंजीपतियों ने आसपास से भी पुलिस के सिपाही और सुरक्षाकर्मियों को बुला रखा था। इसके अलावा कुख्यात पिंकरटन एजेन्सी के गुण्डों को भी हथियारों से लैस करके मजदूरों पर हमला करने के लिए तैयार रखा गया था। पूंजीपतियों ने इसे "आपात स्थिति" घोषित कर दिया था। शहर के तमाम धन्नासेठों और व्यापारियों की बैठक लगातार चल रही थी जिसमें इस "खतरनाक स्थिति" से निपटने पर विचार किया जा रहा था।

3 मई को शहर के हालात बहुत तनावपूर्ण हो गये जब मैकार्मिक हार्वेस्टिंग मशीन कम्पनी के मजदूरों ने दो महीने से चल रहे लॉक आउट के विरोध में और आठ घण्टे काम के दिन के समर्थन में कार्रवाई शुरू कर दी। जब हड़ताली मजदूरों ने पुलिस पहरे में हड़ताल तोड़ने के लिए लाये गये तीन सौ गद्दार मजदूरों के खिलाफ मीटिंग शुरू की तो निहत्थे मजदूरों पर गोलियां चलाई गईं। चार मजदूर मारे गये और बहुत से घायल हुए। अगले दिन भी मजदूर ग्रुपों पर हमले जारी रहे। इस बर्बर पुलिस दमन के खिलाफ चार मई की शाम को शहर के मुख्य बाजार **हे मार्केट स्क्वायर** में एक जनसभा रखी गयी। इसके लिए शहर के मेयर से इजाजत भी ले ली गयी थी।

मीटिंग रात आठ बजे शुरू हुई। करीब तीन हजार लोगों के बीच पारसन्स और स्पाइस ने मजदूरों का आह्वान किया कि वे एकजुट और संगठित रहकर पुलिस दमन का मुकाबला करें। तीसरे वक्ता सैमुअल फील्डेन बोलने के लिए जब खड़े हुए तो रात के दस बज रहे थे और जोरों की बारिश शुरू हो गई थी। इस समय तक स्पाइस और पार्सन्स अपनी पत्नी और दो बच्चों के साथ वहां से जा चुके थे। इस समय तक भीड़ बहुत कम हो चुकी थी -- करीब दो सौ लोग ही रह गये थे। मीटिंग करीब-करीब खत्म हो चुकी थी कि 180 पुलिसवालों का एक जत्था धड़धड़ाते हुए हे मार्केट स्क्वायर आ पहुंचा। उसकी अगुवाई कैप्टन बॉनफील्ड कर रहा था जिससे शिकागो के नागरिक उसके क्रूर और बेहूदे स्वभाव के कारण नफरत करते थे। मीटिंग में शामिल लोगों को चले जाने का हुक्म दिया गया। सैमुअल फील्डेन पुलिस वालों को यह बताने की कोशिश ही कर रहे थे कि यह शान्तिपूर्ण सभा है, कि इसी बीच किसी ने मानो इशारा पाकर एक बम फेंक दिया। आज तक बम फेंकने वाले का पता नहीं चल पाया है। शिकागो में यह माना जाता है कि बम फेंकने वाला पुलिस का भाड़े का टट्टू था। स्पष्ट था कि बम का निशाना मजदूर थे लेकिन पुलिस चारों ओर फैल गयी थी और नतीजतन बम का प्रहार पुलिसवालों पर हुआ। एक मारा गया और पांच घायल हुए। पगलाये पुलिस वालों ने चौक को चारों ओर से घेरकर भीड़ पर अंधाधुंध गोलियां चलानी शुरू कर दी। जिसने भी भागने की कोशिश की उसपर गोलियां और लाठियां बरसायी गयीं। छः मजदूर मारे गये और 200 से ज्यादा जख्मी हुए। मजदूरों ने अपने खून से अपने कपड़े रंगकर उन्हें ही झण्डा बना लिया। तभी से मजदूरों के झण्डे का रंग लाल हो गया।

इस घटना के बाद पूरे शिकागो में पुलिस ने मजदूर बस्तियों, मजदूर संगठनों के दफ्तरों, छापाखानों आदि में जबर्दस्त छापे डाले। प्रमाण जुटाने के लिए हर चीज उलट-पुलट डाली गयी। सैकड़ों लोगों को मामूली शक पर पीटा गया और बुरी तरह टार्चर किया गया। हजारों गिरफ्तार किये गये।

आठ मजदूर नेताओं -- **अल्बर्ट पारसन्स, आगस्टस स्पाइस, जार्ज एन्जेल, एडाल्फ फिशर, सैमुअल फील्डेन, माइकेल श्वाब, लुइस लिंग्ग** और **आस्कर नीबे** पर मुकदमा चलाकर उन्हें हत्या का मुजरिम करार दिया गया। इनमें से सिर्फ एक, सैमुअल फील्डेन बम फटने के समय घटना स्थल पर मौजूद था। जब मुकदमा शुरू हुआ तो सात लोग ही कठघरे में थे। डेढ़ महीने तक अल्बर्ट पार्सन्स पुलिस से बचता रहा। वह पुलिस की पकड़ में आने से बच सकता था लेकिन उसकी आत्मा ने यह गवारा नहीं किया कि वह आजाद रहे जबकि उसके बेकसूर साथी फर्जी मुकदमे में फंसाये जा रहे हों। पार्सन्स खुद अदालत में आया और जज से कहा "मैं अपने बेकसूर कामरेडों के साथ कठघरे में खड़ा होने आया हूं।"

पूंजीवादी न्याय के लम्बे नाटक के बाद 20 अगस्त 1887 को शिकागो की अदालत ने अपना फैसला दिया। सात लोगों को सजाए-मौत और एक (नीबे) को पन्द्रह साल कैद बामशक्कत की सजा दी गयी। **स्पाइस** ने अदालत में चिल्लाकर कहा था कि **"अगर तुम सोचते हो कि हमें फांसी पर लटका कर तुम मजदूर आन्दोलन को... गरीबी और बदहाली में कमरतोड़ मेहनत करने वाले लाखों लोगों के आन्दोलन को कुचल डालोगे, अगर यही तुम्हारी राय है -- तो खुशी से हमें फांसी दे दो। लेकिन याद रखो ... आज तुम एक चिन्गारी को कुचल रहे हो लेकिन यहां-वहां, तुम्हारे पीछे, तुम्हारे सामने, हर ओर लपटें भड़क उठेंगी। यह जंगल की आग है। तुम इसे कभी भी बुझा नहीं पाओगे।"**

सारे अमेरिका और तमाम दूसरे देशों में इस क्रूर फैसले के खिलाफ भड़क उठे जनता के गुस्से के दबाव में अमेरिका के सुप्रीम कोर्ट ने पहले तो अपील मानने से इंकार कर दिया लेकिन बाद में इलिनाय प्रान्त के गर्वनर ने फील्डेन और श्वाब की सजा को आजीवन कारावास में बदल दिया। 10 नवम्बर 1887 को सबसे कमउम्र नेता लुइस लिंग्ग की पुलिस टार्चर से कालकोठरी में मौत हो गयी।

काला शुक्रवार

अगला दिन (11 नवम्बर 1887) मजदूर वर्ग के इतिहास में काला शुक्रवार था। **पार्सन्स, स्पाइस, एंजेल** और **फिशर** को शिकागो की कुक काउण्टी जेल में फांसी दे दी गई। अफसरों ने मजदूर नेताओं की मौत का तमाशा देखने के लिए शिकागो के दो सौ धनवान शहरियों को बुला रखा था। लेकिन मजदूरों को डर से कांपते-घिघियाते देखने की उनकी तमन्ना धरी की धरी रह गयी। वहां मौजूद एक पत्रकार ने बाद में लिखा: *"चारो मजदूर नेता क्रान्तिकारी गीत गाते हुए फांसी के तख्ते तक पहुंचे और शान के साथ अपनी-अपनी जगह पर खड़े हुए। फांसी के फंदे उनके गलों में डाल दिये गये। स्पाइस का फंदा ज्यादा सख्त था, फिशर ने जब उसे ठीक किया तो स्पाइस ने मुस्करा कर धन्यवाद कहा। फिर स्पाइस ने चीखकर कहा,* ***'एक समय आयेगा जब हमारी खामोशी उन आवाजों से ज्यादा ताकतवर होगी जिन्हें तुम आज दबा डाल रहे हो!...*** *' फिर पारसन्स ने बोलना शुरू किया, 'मेरी बात सुनो... अमेरिका के लोगो! मेरी बात सुनो ...* ***जनता की आवाज को दबाया नहीं जा सकेगा...'*** *लेकिन इसी समय तख्ता खींच लिया गया।"*

13 नवम्बर को चारो मजदूर नेताओं की शवयात्रा शिकागो के मजदूरों की एक विशाल रैली में बदल गयी। पांच लाख से भी ज्यादा लोग इन नायकों को आखिरी सलाम देने के लिए सड़कों पर उमड़ पड़े।

तब से गुजरे 110 सालों में अनगिन संघर्षों में बहा करोड़ों मजदूरों का खून इतनी आसानी से धरती में जज्ब नहीं होगा। फांसी के तख्ते से गूंजती स्पाइस की पुकार पूंजीपतियों के दिलों में खौफ पैदा करती रहेगी। अनगिन मजदूरों के खून की आभा से चमकता लाल झण्डा आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता रहेगा। ●

स्वत्वाधिकारी **डा. दूधनाथ** द्वारा 69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वानी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंग : **मुद्रण प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन**, लखनऊ। सम्पादक : **डा. दूधनाथ** |सम्पादकीय कार्यालय : 69, बाबा का पुरवा (पुराना), पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ–226001; सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ